INTERNATIONAL JOURNAL OF NOVEL RESEARCH AND DEVELOPMENT (IJNRD)
© 2026 IJNRD | Volume 11, Issue 1, January 2026 | ISSN: 2456-4184 | IJNRD.ORG

कबीरदास का भक्तिलोक

डॉ. गीता प्रजापति

असिस्टेंट प्रोफेसर (हिन्दी विभाग)

कुं.आर.सी. महिला महाविद्यालय,मैनपुरी

सारांश - नारद ने अपने भक्ति सूत्र में भक्ति को परिभाषित करते हुए कहा है- 'ईश्वर के प्रति प्रेम ही भक्ति है।' शांडिल्य ने भी इसी से मिलती जुलती परिभाषा दी है- 'ईश्वर के प्रति प्रेम अनुराग ही भक्ति है'- 'सा परानुरक्तिः ईश्वरे।'1 इस प्रेमरूपा और अमृतस्वरूपा भक्ति को प्राप्त करके मनुष्य सिद्ध हो जाता है,साधक हो जाता है। ईश्वर के प्रति अनुराग की प्रगाढ़ता होने के कारण साधक लौकिक और वैदिक कर्म कांडों का त्याग कर देता है।वह अपने प्रियतम भगवान में अनन्यता और प्रतिकूल विषयों के प्रति उदासीनता हो जाता है। कबीरदास जी भी अपने आराध्य से तादात्म्य होने के लिए सभी लौकिक और वैदिक कर्मकांडो का त्याग करते हैं। वे छापा,माला,तिलक को नकारते हुए केवल और केवल नाम की महत्ता पर जोर देते हैं - ' मुआ कबीर जपत श्री रामा'।

बीज शब्द- भक्ति, प्रेम,साधना,निर्गुण, योग,प्रियतम,परमात्मा

शोध सार - कबीर जी ने नारदीय भक्ति का ही अवगाहन किया था, 'भगति नारदी मगन सरीरा,हरषि हरषि गुन गाय कबीरा।' 2

जिस समय कबीर जी जन्मे थे,वह समय ही भक्ति की लहर का था। उस लहर को बढ़ाने के प्रबल कारण भी प्रस्तुत थे। इसे रामचंद्र शुक्ल ने 'हिंदी साहित्य के इतिहास' में बताया है -'भक्ति का जो सोता दक्षिण की ओर से धीरे-धीरे उत्तर भारत की ओर आ रहा था,उसे राजनीतिक परिवर्तन के कारण शून्य पड़ते हुए जनता के हृदय क्षेत्र में फैलने के लिए पूरा स्थान मिला'।3

मुसलमानों के भारत में आ बसने से परिस्थिति में बहुत कुछ परिवर्तन हो गया। हिन्दू जनता का नैराश्य दूर करने के लिए भक्ति का आश्रय ग्रहण करना आवश्यक था। इसके अलावा कुछ लोगों ने हिन्दू और मुसलमान भक्त संतों की परम्परा विरोधी जातियों को एक करने की कोशिश की। इस प्रयास से एक ऐसे सामान्य भक्ति मार्ग का विकास हो रहा था जिससे ईश्वर की एकता के आधार पर मनुष्यों को भी एक किया जा सके। मुसलमानों के आने से हिंदू समाज पर एक अलग प्रभाव पड़ा। उन्होंने देखा कि मुसलमानों में द्विजों और शूद्रों का भेद नहीं है। सधर्मी होने के कारण वे सब एक हैं, उनके व्यवसाय ने उनमें कोई भेद नहीं डाला है, न उनमें कोई छोटा है, न कोई बड़ा। इसीलिए शूद्रों में से ही कुछ ऐसे महात्मा निकले जो सिर्फ़ और सिर्फ़ मनुष्य की एकता को उद्घोषित करना चाहते थे। इस नवोत्थित भक्ति के रंग में रंगकर हिन्दू समाज में प्रचलित भेदभाव के विरुद्ध जमकर आवाज़ उठाई गई। वर्ण भेद और वर्ग भेद की उच्चता और निम्नता को निर्गुण भक्ति ने दूर करने का प्रयत्न किया। दोनों के मिश्रण से हिन्दी साहित्य के इतिहास में निर्गुण भक्ति मार्ग चल पड़ा। रामानंद जी के बारह शिष्यों में से कुछ निर्गुण मार्ग के प्रवर्तन में प्रवृत्त हुए जिनमें कबीरदास जी प्रमुख थे।

कबीर इस निर्गुण भक्ति प्रवाह के प्रवर्तक हैं। कबीर ने हिंदू धर्म के मूल सिद्धांतों को मुसलमान धर्म के मूल सिद्धांतों से मिलाकर एक नए पंथ की कल्पना की जिसमें ईश्वर एक था।'4

उसकी सत्ता प्रत्येक कण में थी। संत मत में भक्ति और साधना की चरम अभिव्यक्ति है ।

कबीर को 'राम नाम' रामानंद जी से प्राप्त हुआ पर आगे चलकर कबीर के राम-रामानंद के नाम से अलग हो गए। उनके राम धनुर्धर साकार राम नहीं बल्कि वे निर्गुण ब्रह्म के पर्याय हो गए-

'दशरथ सुत तिहुं लोक बखाना

राम नाम का मरम है आना।'5

उनकी प्रवृत्ति निर्गुण उपासना की ओर हुई ।जो ब्रह्म हिंदुओं की विचार पद्धति में ज्ञान मार्ग का एक निरूपण था उसी को कबीर ने सूफियों के ढर्रे पर उपासना का ही विषय नहीं प्रेम का भी विषय बनाया और उसकी प्राप्ति के लिए हठयोगियों की साधना का समर्थन किया। इस प्रकार उन्होंने भारतीय ब्रह्मवाद के साथ सूफियों के भावात्मक रहस्यवाद हठयोगियों के साधनात्मक रहस्यवाद और वैष्णव के अहिंसवाद तथा प्रपत्तिवाद का मेल करके अपना एक अलग रास्ता बनाया ।

सेवक-सेव्य भाव में स्वामी में कृपा, क्षमा ,औदार्य आदि गुणों का आरोप हो ही जाता है। इसीलिए कबीर की वाणी में कहीं-कहीं निरूपाधि ही निर्गुण ब्रह्म सत्ता का संकेत मिलता है जैसे-

'पंडित मिथ्या करहु विचारा,न वह सृष्टि न सिरजनहारा ।

ज्योति सरूप काल नहि उहंवआ,वचन न आदि सरीरा ।

थूल अथूल पवन नहीं पावत,रवि ससि धरना न नीरा।'6 '

इसी तरह उनके उपासना में सर्ववाद की झलक भी मिलती है -

'आपुहि देवा आपुहि पाती ,आपुहि कुल आपुहि है जाती।'7

कबीरदास जी के पद में निर्गुण ब्रह्म के लिए कृपालु,भक्तवत्सल, भौहारी आदि शब्दों का प्रयोग मिलता है। भक्ति चाहे निर्गुण की हो चाहे सगुण की उसमें आराध्य की भक्तवत्सलता का गुण तो मानना ही पड़ेगा ।जिस प्रकार सगुण भक्ति में इष्टदेव में निर्गुण ब्रह्म के गुणों का आरोप स्वाभाविक और आवश्यक है, उसी प्रकार निर्गुण भक्ति में आराध्य के सगुण ब्रह्म के गुणों का आरोप भी स्वाभाविक है। 'कबीर आदि संत कवियों और जायसी आदि सूफी कवियों को निर्गुण भक्ति धारा में स्वीकार करने के दो कारण माने जाते हैं ,पहला कारण है इष्टदेव की अगोचर, अक्षर और सर्वशक्तिमान सत्ता के रूप में स्वीकृति और दूसरा कारण है इष्टदेव के किसी गोचर विशिष्ट और अक्षरों की स्वीकृति का अभाव।'8

कबीरदास जी की निर्गुण भावना भी उनके लिए स्थूल भावना है जो मूर्ति पूजकों की सगुण भावना के विरोधी पक्ष का प्रदर्शन मात्र करती है ।उनकी भावना कहीं -कहीं निर्गुण भावना से भी सूक्ष्म दिखाई देती है ।वे राम को सगुण और निर्गुण दोनों रूपों में समझते हैं -'

'अला एके नूर उपनाया ताकि कैसी निंदा ।

ता नूर थै जग कीया कौन भला कौन मंदा ।'9

कबीर दास जी को ऐसा कोई शास्त्र मान्य नहीं है जो आत्मज्ञान को कुंठित करता हो।उनके अनुसार तीर्थ,व्रत ,पूजा, नमाज, रोजा सब गुमराह करने वाले तत्व है इसीलिए यह सब आग्रह्य है-'वे वैष्णवों को अपना सगी कहते हैं किंतु विष्णु को चौदह भुवनों का चौधरी कहकर मजाक उड़ाते हैं। शाक्तों से उन्हें घृणा है- 'साकत काली कामरी' हिंदू तुर्क दोनों झूठे हैं।गोरखनाथ उनके श्रद्धेय हैं पर गोरखपंथी उपहास्य। 'चुंडित-मुंडित'श्रावकों और श्रमणों के लिए उनके यहां जगह नहीं है।'10 कबीरदास जी से बड़ा मूर्ति भंजक इतिहास में दूसरा नहीं हुआ। वे दूसरों की ही नहीं बल्कि अपनी भी मूर्ति तोड़ तोड़कर गढ़ते हैं।वे कहते हैं कि 'साखी सबदी गावत भूले।'यदि साखी सबदी का गाना अपने आपमें संस्कार हो गया तो वह भी उन्हें अस्वीकार्य है।

कबीरदास ने अपने आराध्य को बुलाने के लिए राम,रहीम,अल्लाह,सत्यनाम, गोविंद साहब,आप आदि अनेक शब्दों का प्रयोग किया ।उन्होंने कहा भी है -अपरंपार का नाउ अनंत'। कबीर ने जितने भी तत्व ज्ञान की बात की वह किसी दार्शनिक ग्रंथों के अध्ययन से नहीं बल्कि समाज रूपी विश्वविद्यालय की अनुभूति और अनुभव से की है।कबीरदास जी में भौतिक ब्रह्मावाद कहीं मिलता ही नहीं और आत्मवाद की उन्होंने जगह-जगह चर्चा की है ।ब्रह्म ही जगत में एकमात्र सत्ता है, इसके अलावा संसार में कुछ भी नहीं है जो कुछ है वह ही है ।ब्रह्म से ही हर जीव की उत्पत्ति होती है और वह फिर उसी में लीन हो जाता है -

'पाणी ही ते हिम भया,हिम ह्वै गया बिलाइ।

जो कुछ था सोई भया,अब कुछ कहा न जाइ।'11

उनका मानना है कि जिस प्रकार एक छोटे से बीज के अंदर वट का वृहदाकार वृक्ष अंतर्निहित रहता है उसी प्रकार यह सृष्टि भी ब्रह्म में अंतर्निहित है ।एक और तरह से कबीरदास जी ने भारतीय पद्धति से यह संबंध प्रदर्शित किया है-

'जल मैं कुंभ कुंभ मैं जल है,बाहरि भीतरि पानी।

फूटा कुंभ जल जलहि समाना,यह तत्त्व काहौं गियानी।'12

यह नामरूपात्मक दृश्य जो चर्म चक्षुओं को दिखाई देता है, जल में घड़ा है जिसके बाहर ब्रह्म रूपी पानी है और अंदर भी।ब्रह्म रूप का नाश हो जाने पर घड़े के अंदर का जल जिस प्रकार बाहर वाले जल में मिल जाता है ।उसी प्रकार ब्रह्म रूप के अभ्यंतर का ब्रह्म भी अपने ब्रह्म में समा जाता है।

उनका मानना है कि जिसे भी ईश्वर का साक्षात्कार हो जाता है वही केवल अमर है। जन्म मरण का भय उन्हें नहीं रह जाता है।कबीरदास जी को भी ब्रह्म का साक्षात्कार हो गया था।इसीलिए वे डंके की चोट पर कहते हैं-

'हम न मरै मरिहैं संसारा, हमकूं मिल्या जियावन हारा।

अब न मरौ मरनै मनमाना, तेई मुह जिन राम न जाना ।'13

कबीर की भक्ति मनुष्य की एकता और उसके प्रेम तक ही परिणति नहीं है ,वे मानते हैं कि संसार की सभी जीव-जन्तु परमात्मा की सीमा के अंदर आते हैं क्योंकि 'सबै जीव साईं के प्यारा है' चाहे वह जिस जाति ,वर्ग और धर्म का हो। अंग्रेजी के कवि कॉलरिज ने भी यही भाव प्रकट किया है-

" He pray best who loved best

All things both great and small

For the dear God who loved us

He made and loved all"14

कबीरदास जी ने परमात्मा को प्रियतम के रूप में देखा जो भारतीय माधुरी भाव से सर्वथा मिलती-जुलती है । भारतीय काव्य में स्त्रियों के पक्ष में विरह अधिक आई है ।प्रेमिका विरह से व्याकुल होकर मुरझाए हुए फल की तरह अपनी सत्ता को मिटा देती है। कबीर की व्याकुलता भी कुछ इसी तरह है -

'अंखड़िया झांई पड़ी,पंथ निहारि- निहारि।

जिभड़िया छाला पड़ा, राम पुकारि- पुकारि ।।'15

सर्ववात्मवाद मूलक रहस्यवाद में माधुर्य भाव का उदय हुआ ।जो कबीर और प्रेमाख्यान के सब मुसलमान कवियों में विद्यमान है । वैष्णवों और सूफियों की उपासना माधुर्य भाव से युक्त होती है ।दार्शनिकों ने परमात्मा को पुरुष और जगत को स्त्री रूप में प्रकृति कहा है। माधुर्य भाव इसी का भावुक रूप है, जिसमें परमात्मा की प्रियतम के रूप में भावना की जाती है और जगत के नाना रूप स्त्री रूप में देखे जाते हैं ।मीराबाई ने तो केवल कृष्ण को ही पुरुष माना है।जगत में पुरुषों ने और उन्हें कोई दिखाई ही नहीं दिया।कबीरदास जी भी कहते हैं -

१.कहै कबीर हम ब्याह चलें हैं पुरुष एक अविनासी।

२.सखी सुहाग राम मोहि दीन्हा।16

इस तरह के एक दो नहीं कई उदाहरण दिए जा सकते हैं। राम की सुहागिन अपने पहले प्रेम का निवेदन करती है- 'गोकुल नायक बीटल मन लागौं तोहि रौ।'17 यह जीवात्मा का परमात्मा में लगन लगने का शुरुआती दिन होता है ।इसे विवाह के पहले का पुर्वानुराग समझना चाहिए।

कभी वह वियोगिनी के रूप में प्रकट होती है और उस वियोगाग्नि में जले हुए हृदय के उद्गार प्रकट करती है -

'यह तन जालौं मसि करौं,लिखौं राम का नाऊं।

लेखणि करौं कलंक की, लिखि लिखि राम पठाऊं।।'18

परमात्मा के वियोग से जनित सारी सृष्टि का दु:ख कितना घना होकर कबीर के में समाया हुआ है।राम के वियोग में कबीर उन दिनों का इंतजार करते हैं जब वह अपने प्रियतम का आलिंगन करेंगे-

'वै दिन कब आवैंगे भाई

जा कारनि हम देह धरी है, है मिलबौ अंग लगाई ।'19

यह जीवात्मा का परमात्मा से मिलने की व्याकुलता ही है,जो उसे एक क्षण भी चैन नहीं लेने दे रहा है। ज्यों -ज्यों जीवात्मा को अपनी परमात्मिकता का अनुभव हो जाता है,त्यों -त्यों उसका भय जाता रहता है।लौकिक भाषा में इसी की ओर इशारा किया गया है-

'अब तोहिं जान न दैहू राम पियारे।

ज्यों भावे व्यू होहु हमारे ।'20

'यह प्रेम की ढिठाई है। परमात्मा से मिलने के लिए ऐसी ऊंची गैल राह रपटीली नहीं तय करनी पड़ती है।'जहां पांव नहीं ठहराय' वह तो घर बैठे भी मिल जाएंगे पर उसके लिए पहुंची हुई लगन चाहिए क्योंकि परमात्मा तो हृदय में ही है -'

'बहुत दिनन के बिछरे हरि पाये।

भाग बड़े घरि बैठे आते ।'21

कबीरदास जी की भक्ति आराधना का पद जो लोगों की जिह्वा पर सबसे ज्यादा रहा है -'मो को कहां ढूंढे बंदे मैं तो तेरे पास में ।

ना मैं देवन,ना मैं मसजिद, ना कावे कैलास में।'

उनका ईश्वर तो संसार के कण-कण में व्याप्त है ।वह कहीं एक जगह स्थिर रूप से नहीं मिलने वाला है। बहुत प्रयत्न करने पर ईश्वर का साक्षात्कार अपने घट के भीतर ही हो सकता है ।

कबीर रहस्यवादी कवि हैं ।रहस्यवाद के मूल में अज्ञात शक्ति की जिज्ञासा काम करती है। संसार चक्र का प्रवर्तन किसी अज्ञात व्यक्ति के द्वारा होता है। इस बात का अनुभव मनुष्य अनादि काल से करता चला आया है ।उस अज्ञात शक्ति को जानने की इच्छा सदैव मनुष्य को रही है और रहेगी परंतु वह शक्ति उस प्रकार स्पष्टता से नहीं दिखाई दे सकती है,जिस प्रकार जगत के अन्य दृश्य रूप और उनका ज्ञान ही उस प्रकार साधारण विचारधारा के द्वारा हो सकता है, जिस प्रकार इन दृश्यों रूपों का होता है। अपनी लगन से जो इस क्षेत्र में सिद्ध हो गये हैं उन्हें जब - जब अपनी अनुभूत बताने का जिक्र किया गया है तब- तक वे अपनी उक्तियों में कोई स्पष्ट जानकारी देने में असमर्थ रहें। लेकिन कबीर दास जी ने स्पष्ट कर दिया है कि परमात्मा का प्रेम और उसकी अनुभूति गूंगे के गुड़- सा है -

'अकथ कहानी प्रेम की, कछु कही न जाइ।

गूंगे केरी सरकरा, बैठा मुसकाइ।

तजि बातें दाहिनै बिकार,हरि पद दाढ़ करि गहिए।

कहैं कबीर गूंगे गुड़, खाया बूझै तो का कहिए।' 22

यही रहस्यवाद का मूल है ।वेद और उपनिषदों में रहस्यवाद की झलक विद्यमान है ।गीता में भगवान के मुंह से उनकी विभूति का जो वर्णन कराया गया है वह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है ।परमात्मा को पिता, माता, पुत्र अथवा सखा के रूप में देखना ही रहस्यवाद है । कबीर जी अपने परमात्मा को प्रियतम के रूप में देखते हैं।

उनका ब्रह्म लौकिक वासनाओं से परे है। व्यक्तिगत उच्चतम साधन से ही उसकी प्राप्ति हो सकती है। वह स्वयं भक्तों के लिए चिंतित नहीं रहता क्योंकि भक्त ही ब्रह्म है। वह अपने ब्रह्म तत्व की अनुभूति कर लेता है ।परमात्मा को अवतार धारण करने की आवश्यकता नहीं रह जाती है -'न दसरथ घरि औतरि आवा ,लंका का राव सतावा।'

निष्कर्ष - कबीरदास भक्ति से मुक्ति की प्राप्ति की कामना कभी नहीं करते हैं।उनकी भक्ति सभी मनुष्य प्राणियों में मनुष्यता के बीज को बोने और सीचने का काम करती है। उन्होंने एक ऐसी सरल मार्ग की भक्ति को जनता से समक्ष प्रस्तुत किया जिसमें कोई आडंबर नहीं है। वह ईश्वर को अपनी असीम लगन, साधना और नाम जपकर भी प्राप्त कर सकता है। उसे सुबह शाम मंदिर या मस्जिद में हाजिरी लगाने की जरूरत नहीं है।उनकी भक्ति जिस निराकार ईश्वर राम के प्रति है उसके लिए वे शुद्ध प्रेम की चरम सीमा तक पहुंच जाते हैं ।शुद्ध चैतन्य का प्रतिनिधित्व करते हुए कबीर कहते हैं कि न मैं जन्म लूंगा न मरूंगा और न यह सामान्य जीवन ही व्यतीत करूंगा। क्योंकि वे आत्मतत्त्व को सब कुछ बताते हुए वह कहते हैं कि वही मछली हैं और वही कछुआ हैं। कबीर दास जी अपने ईश्वर के प्रति दृढ़ हैं वह कहते हैं कि 'अब मोहि राम भरोसा तेरा।' कबीर ने जिस राम की उपासना की है वह अविगत है परमतत्व है और वेद पुराण आदि उसका मर्म नहीं जानते। उनका राम के बिना कहीं मन नहीं लगता 'जियरा उदास फिरै मोरा राम बिन'।परमात्मा को प्रियतम्मा लेने पर 'हरि मेरा पीव' की उद्घोषणा कर देते हैं और कहते हैं कि उनके बिना शरीर के ताप अर्थात काम, क्रोध, मोह इत्यादि दूर होने वाले नहीं है -'राम बिनु तन को ताप न जाई।'

संदर्भ ग्रंथ -

1. हिन्दी साहित्य ज्ञानकोश- प्रथम संस्करण, पृ.सं.-2529

2.हिन्दी साहित्य ज्ञानकोश- प्रथम संस्करण, पृ.सं.-2530

3. हिन्दी साहित्य का इतिहास- आचार्य रामचंद्र शुक्ल,संस्करण:2015 पृ.सं.-62

4. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास- डॉ. रामकुमार वर्मा,आठवां संस्करण,पृ.सं.207

5. हिन्दी साहित्य का इतिहास- आचार्य रामचंद्र शुक्ल,संस्करण:2015 पृ.सं.-72

6.हिन्दी साहित्य का इतिहास- आचार्य रामचंद्र शुक्ल,संस्करण:2015 पृ.सं.-72

7.हिन्दी साहित्य का इतिहास- आचार्य रामचंद्र शुक्ल,संस्करण:2015 पृ.सं.-72

8. हिन्दी साहित्य का इतिहास -संपादक- डॉ. नगेंद्र, साठवां संस्करण 2018,पृ.सं.113

9.कबीर ग्रंथावली- श्यामसुंदर दास, सातवां संस्करण- 2019,पृ.सं.25

10. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास- डॉ. बच्चन सिंह ,ग्यारवां संस्करण ,2020, पृ.सं 28

11कबीर ग्रंथावली- श्यामसुंदर दास, सातवां संस्करण- 2019,पृ.सं.26

12..कबीर ग्रंथावली- श्यामसुंदर दास, सातवां संस्करण- 2019,पृ.सं.27

13.वही,पृ.सं.128

14.वही,पृ.सं.37

15.वही,पृ.सं.59

16.वही,पृ.सं.39

17.वही,पृ.सं.39

18.वही ,पृ.सं.39

19.वही, पृ.सं.40

20.वही ,पृ.सं.40

21.वही ,पृ.सं.40

22.वही, पृ.सं.152

Copyright & License:

© Authors retain the copyright of this article. This work is published under the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0), permitting unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.

.